तत्त्वोपदेश शास्त्र

रचयिता
सारस्वत कवि, विद्यावाचस्पति
डॉ. श्रमणाचार्य विभव सागर

सम्पादक
डॉ. भागचन्द जैन 'भागेन्दु'

संकलन
आर्यिकारत्न अर्हंश्रीमाताजी

गुरु-प्रार्थना

- आ. विभवसागर:

विरागसागर:, विरागसागर: ।
मुनिषु मुनि:, विरागसागर: ॥

विराग सागर:, विरागसागर: ।
ऋषिषु ऋषि:, विराग सागर: ॥

विरागसागर:, विराग सागर: ।
यतिषु यति:, विरागसागर: ॥

विराग सागर:, विराग सागर: ।
कविषु कवि:, विराग सागर: ॥

विराग सागर:, विराग सागर:
गुरुषु गुरु:, विराग सागर: ॥

मंगल कामना

श्लोक-

नाहं कोविद शास्त्राणां,
नाहं कवि विचक्षण: ।
मया विनय भावेन,
रचित: ग्रन्थ: जयेत् भुवि ॥49॥

अर्थ-	
अहं शास्त्राणां	मैं शास्त्रों का
कोविद	विद्वान नहीं
न ।	नहीं हूँ
अहं	मैं
विचक्षण:	चतुर
कवि:	कवि
न ।	नहीं हूँ।
मया	मेरे द्वारा
विनय भावेन	विनय भाव से
ग्रन्थ: रचित:	यह ग्रन्थ रचा गया
भुवि	पृथ्वी पर
जयेत् ।	जयवंत हो।

भावार्थ— मैं शास्त्रों का विद्वान नहीं हूँ। मैं अतिशय प्रतिभाशाली कवि नहीं हूँ। मेरे द्वारा विनय भाव से रचा गया यह ग्रन्थ पृथ्वी पर सदा जयवन्त हो।

तत्त्वोपदेश शास्त्र
(पाण्डुलिपि प्रकाशन)

कृति :- तत्त्वोपदेश शास्त्र
आशीर्वाद :- प. पू. गणाचार्य श्री विराग सागर जी
कृतिकार :- सारस्वत श्रमण, शास्त्र कवि
श्रमणाचार्य विभव सागर मुनि
सम्पादक :- डॉ. भागचन्द जैन "भागेन्दु"

प्रस्तुति :- आर्यिका रत्न अर्हं श्री माताजी
प्रकाशक :- श्रमण श्रुत सेवा संस्थान, जयपुर (राज.)
श्रमण श्रुत सेवा संस्थान, इन्दौर (म.प्र.)
प्राप्ति :- सौरभ जैन जयपुर, 98291-78749
:- टी. के. वेद इन्दौर, 94251-54777
:- प्रतिपाल टोंग्या, इन्दौर, 93021-06984
:- संघ
:- पुण्यार्जक दानवीर परिवार-
मुद्रक :- नवजीवन प्रेस, निवाई (राज.)

आशीर्वाद से सफलता

पठनार्थं शुभाशिषः, शान्त्यर्थं शुभ-कामनाः।
ज्ञानार्थं मध्ययनम्कार्यं, आशिषः सफला भवेत् ॥51॥

अन्वयार्थ-

पठनार्थं	पढ़ने को
शुभाशिषः	शुभाशीष
शान्त्यर्थं	शान्ति के लिए
शुभ-कामनाः	शुभ कामना
ज्ञानार्थम् अध्ययनकार्यं	ज्ञान और अध्ययन कार्य को
आशिषः	आशीष दो आपके आशीष से
सफला	सफल
भवेत् ।	होवे ।

भावार्थ- हे गुरु! पढ़ने को शुभाशीष, शान्ति के शुभकामना, ज्ञान और अध्ययन कार्य को आशीर्वाद दो आपके आशीर्वाद से हमारे कार्य सफल होवे।

गुरु स्मरण

श्लोक- विरागाय नमो नित्यं,
यम संयम धारकः।
दीक्षा शिक्षा प्रदातारः,
वन्दे विराग सागरम् ॥50॥

अर्थ-

यम-संयम धारकः	यम-संयम को धारण करने वाले
विरागाय	श्री विराग सागर गुरु के लिए
नित्यं	हमेशा
नमः	नमस्कार हो।
दीक्षा-शिक्षा प्रदातारः	दीक्षा और शिक्षा को प्रदान करने वाले
विरागसागरम्	श्री विराग सागर गुरु की
वन्दे।	मैं वन्दना करता हूँ।

भावार्थ- यम-संयम को धारण करने वाले श्री विराग सागर गुरु देव के लिए हमेशा नमस्कार हो। दीक्षा और शिक्षा को प्रदान करने वाले श्री विराग सागर गुरु की मैं वन्दना करता हूँ॥

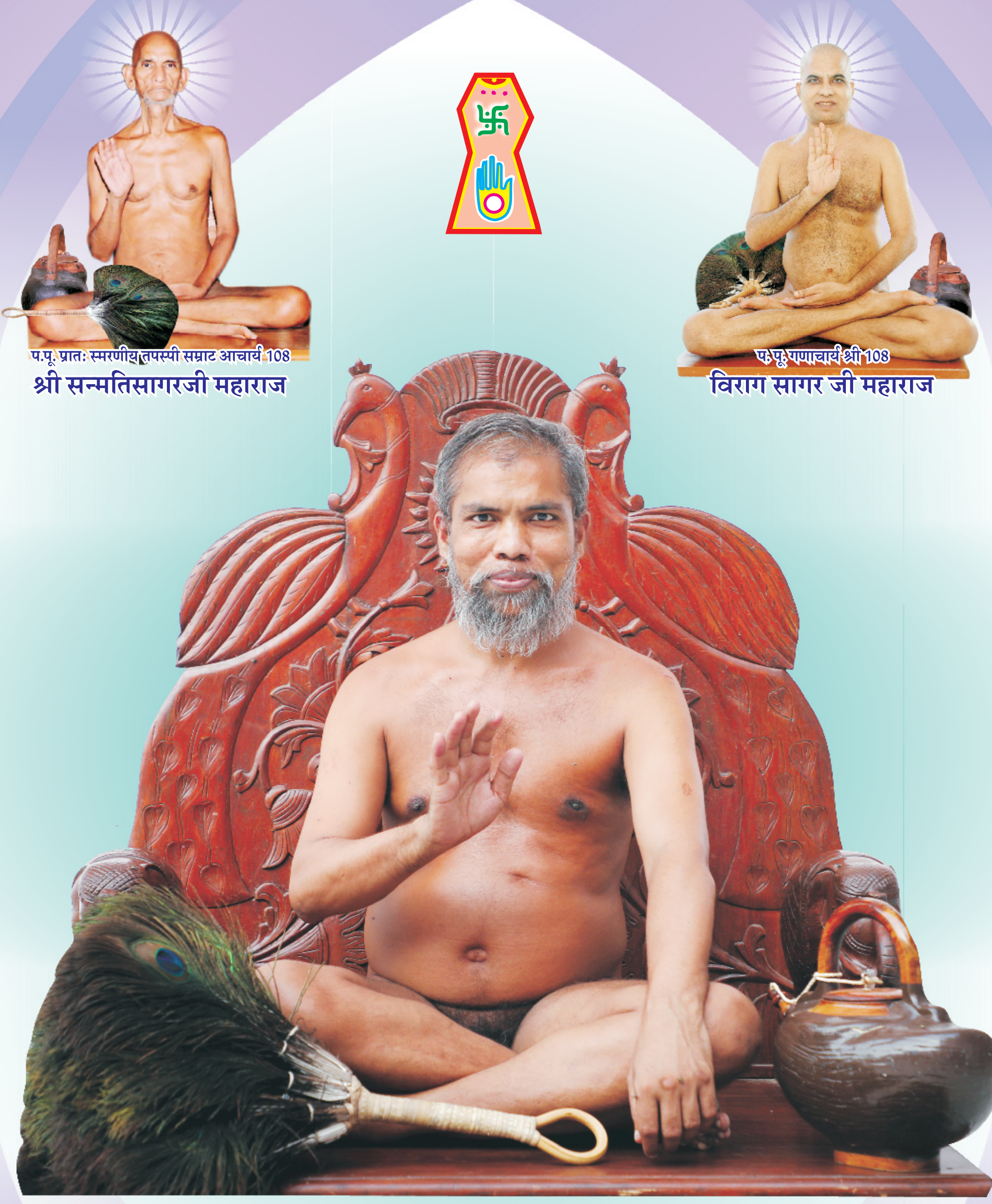

कृतिकार
सारस्वत कवि श्रमणाचार्य
विभवसागर मुनिराज

24.	आत्म कल्याण प्रेरक अनित्य भावना	24
25	आत्म परिचय	25
26	आत्म बोध	26
27.	स्वरूप परिचय	27
28.	निजानुभूति अभिव्यक्ति	28
29.	भक्त अमर होता	29
30.	कर्त्तव्य-बोध	30
31.	संयम-प्रेरणा	31
32.	संयम धारण का फल	32
33	कौन क्या फल देता है?	33
34	आशीर्वाद	34
35	धर्म करने की प्रेरणा	35
36	धर्म धारण का फल	36
37	संसार में कोई सुखी नहीं।	37
38	कर्म फल विचित्रता का कारण	38
39	कर्म गति विचित्रता	39
40	विचित्रता का कारण क्या?	40
41	धर्म से सुख मोह से दुख	41
42-47	अव्यय बोध	42-47
48	गुरु परम्परा स्मरण	48
49	मंगल कामना	49
50	गुरु स्मरण	50
51	आशीर्वाद से सफलता	51

अव्यय बोध-

श्लोक-

बलवत् अथवा वारं,
प्राक् साक् प्रत्यग् अरं रहः।
पुरस्तात् दक्षिणा सकृत्,
प्रोक्तं सर्वाणि अव्ययं ॥45॥

शब्दार्थ-

बलवत्	पूर्णरूपेण
अथवा	अथवा, वा
वारं	बारम्बार
प्राक्	पहिले, आगे, पूर्व में, पूर्व
साक्	शीघ्र
प्रत्यग्	विपरीत दिशा
अरम्	शीघ्र
रहः	एकान्त में, चुपके से, एकान्त
पुरस्तात्	सामने, पूर्व में, पूर्व से, पूर्व।
दक्षिणा	दक्षिण (दिशा में, देश में)
सकृत्	एक बार
प्रोक्तं सर्वाणि अव्ययं	कहे गये ये सभी अव्यय हैं।

गुरु परम्परा स्मरण

श्लोक

नमः श्री आदि सिन्धुभ्यो,
महावीराय श्री नमः।
विमलेभ्यः नमो नित्यं,
सन्मत्यै सदा नमः ॥48॥

अर्थ-

श्री आदिसिन्धुभ्यो नमः।	श्री आदिसागर (अंकलीकर) आचार्य के लिए नमस्कार हो।
श्री महावीराय नमः	श्री महावीर कीर्ति के लिए नमन।
विमलेभ्य नित्यं नमः।	श्री विमल सागर जी के लिए हमेशा नमस्कार हो।
सन्मत्यै सदा नमः।	श्री तपस्वी सम्राट सन्मति सागर के लिए हमेशा नमस्कार हो।

"प्रस्तावना"

डा: श्रमणाचार्य विभवसागर

स्वपर हिताय, जनगण सुखाय प्रस्तुत कृति "तत्त्वोपदेश शास्त्र" का प्रतिपाद्य विषय आत्म तत्त्व प्रधान, आत्म कल्याण कारक, आत्म तत्त्व परिचायक, आत्मसुख विधायक है।

प्रस्तुत कृति वस्तुतः प्रकीर्णक रूप से स्वरचित श्लोकों का दुर्लभ संकलन है। स्वाध्याय एवं संस्कृत व्याकरण अभ्यास काल में सीखने के उद्देश्य से यह श्लोक मैंने रचे। संस्कृत भाषा के विद्वत्प्रवर भागचन्द "भागेन्दु" को अवलोकन कराया, तब वह बहुत प्रसन्न हुए। प्रकाशन की प्रेरणा आपकी रही। तत्काल आपने कुशल सम्पादन किया।

आपके सिद्ध हस्त कमलों से सम्पादित यह संस्कृत मनीषियों में अनुराग उत्पन्न करेगी। तथा सहज, सरल, उपदेशशैली, विभिन्न विषयों सार संक्षेप युक्त यह कृति बालबोधाय भी प्रसिद्ध होगी।

अन्वय बोध

श्लोक –
अमा आहो उताहो स्वित्,
किं किमुत अतीव नो।
प्रायेण पुरतः अन्वक्,
वस्तुतः यदि वा तदा ॥46॥

शब्दार्थ –

अमा	साथ या समीप।
आहो	अथवा या।
उताहो	अथवा या।
स्वित्	वितर्क में।
किं	क्यों, क्या, कुत्सा अर्थ में।
किमुत	कहना ही क्या।
अतीव	बहुत ही, अत्यन्त।
नो	नहीं।
प्रायेण	प्रायः, अक्सर, बहुतबार।
पुरतः	सामने, आगे।
अन्वक्	पीछे।
वस्तुतः	यथार्थ रूप, मूल रूप से, सत्यतः
यदि वा	अथवा।
वा	अथवा।
तदा	तब।

अन्वय बोध

श्लोक – नञव्ययमन्व्ययं अस्ति,
तानि कानि हि प्रच्छसि।
स्वर्प्रातर्बहिरन्तर,
प्र परा अप सं अनु ॥47॥

शब्दार्थ –

नञव्ययम् न अस्ति	जिसका व्यय (परिवर्तन) नहीं है वह अव्यय है।
अव्ययम्	
तानि कानि	वे अव्यय कौन-कौन हैं-
हि प्रच्छसि	निश्चय से तुम पूछते हो कहते हैं-
स्वर्	स्वर्ग लोक वाची "स्वर्"
प्रातर्	प्रातःकाल वाची "प्रातर्"
बहिर्	बाहर
अन्तर	अन्दर
प्र	
परा	
अप	तक, मर्यादा अर्थ में।
सं, शं, शम	सुख, शान्ति, कल्याण
अनु	पीछे, के साथ-साथ।

विषय - सूचि

गाथाक्र.		पेज क्र.
1.	मंगलाचरण	1
2.	मंगलाचरण	2
3.	शास्त्र प्रतिज्ञा एवं प्रयोजन	3
4.	मंगल - स्मरण	4
5.	पंच परमेष्ठि स्मरण	5
6-10	चतुर्विंशति - स्तव	6-10
11	ईश्वर का परिचय	11
12	ऋद्धि-सिद्धि-विशुद्धि कारक मंत्र	12
13	शान्ति प्रार्थना	13
14	तत्त्वोपदेश कैसा?	14
15	सर्वश्रेष्ठ क्या है?	15
16	गुरु उपदेश महिमा	16
17	मन को स्थिर करने का उपाय	17
18	हेय - उपादेय कथन	18
19	भाव विशुद्धि महिमा	19
20	आत्मा का स्वरूप	20
21	अपूर्व रत्नत्रय	21
22	रत्नत्रय से साधु	22
23	अभेद दशा का वर्णन	23

यह समग्र श्लोक मुझे मेरी संयमपुत्री, संस्कारसुता, संस्कृत स्वाध्याय-शीला, दीक्षिता शिष्या आर्यिका रत्न अर्हं श्री माताजी ने अपनी डायरी से पुनः प्रदान किये। जबकि यह लेखन / सम्पादन कार्य वर्ष 2016 में दमोह नगर में संस्कृत व्याकरण अध्ययन - अध्यापन काल में हुआ। किन्तु प्रकाशन योग वर्षायोग 2019, निवाई (राज.) के शुभ अवसर पर आया।

मैं प्रत्येक दीपावली को एक नवीन रचना श्री जिन प्रभु को समर्पित करता हूँ, उसी क्रम में 424 के अवतरण दिवस, वीर निर्वाणोत्सव पर्व पर यह कृति माँ जिनवाणी के पुण्यभण्डार को समर्पित। तथा शुभाशीष प्रदाता परम पूज्य गुरु-चरण में भक्तित्रय पूर्वक कोटि-कोटि नमोऽस्तु।

आर्यिका अर्हं श्री माताजी के लिए

शुभाशीष : आप स्वस्थ रहते हुए संयम का निराकुलतीसे पालन करते हुए जिनभारती के अनुपम श्रुत भण्डार को संरक्षित, संवर्धित करें। आपका मोक्षमार्ग निर्बाध हो।

कृति में वर्णित विषय अनुकूल मणिकांचन रूप है। अतः नहीं अवलोकन करें। पाठकों को शुभाशीर्वाद...।

महावीर पथ प्रणेता !

कार्तिक कृष्ण अमावस्या को भारत वसुंधरा पर जन्म लेने वाले महापुरुष द्वारा रचित तत्त्वोपदेश कृति में प्रतिपाद्य विषय - ईश्वर का परिचय, सर्वश्रेष्ठ क्या ? मन को स्थिर करने का उपाय, अपूर्व रत्नत्रय, कर्तव्य बोध, संयम प्रेरणा, अल्पप बोध इस प्रकार से कृतिकार ने कृति में 51 श्लोकों के माध्यम से अलौकिक विषय प्रतिपादित किये हैं जो सर्वोपयोगी सिद्ध होगी।

आर्यिका अर्हंश्री माता जी

दिनांक 21-10-19

निवाई

धर्म से सुख, मोह से दुःख

श्लोक–

यत्र - यत्र यदा धर्मः,
तत्र - तत्र तदा सुखम् ।
यत्र - यत्र यदा मोहः
तत्र - तत्र तदा दुःखम् ॥41॥

अन्वय–

यत्र - यत्र	जहाँ - जहाँ
यदा	जब
धर्मः	धर्म होता है
तत्र - तत्र	वहाँ - वहाँ
तदा	तदा
सुखम्	सुख होता है ।
यत्र - यत्र	जहाँ - जहाँ
यदा मोहः	जब मोह होता है
तत्र - तत्र	वहाँ - वहाँ
तदा दुःखम्	तब दुःख होता है ।

भावार्थ– जहाँ - जहाँ जब धर्म होता है वहाँ - वहाँ तब सुख होता है, और जहाँ-जहाँ जब मोह होता है वहाँ-वहाँ तब दुःख होता है।

विराग-वंदना

रचयिता
आचार्य विभव सागरः

गुरवे नमः गुरवे नमः ।
विराग सागर गुरवे नमः ॥

मुनये नमः मुनये नमः ।
विराग सागर मुनये नमः ॥

यतये नमः यतये नमः ।
विराग सागर यतये नमः ॥

ऋषये नमः ऋषये नमः ।
विराग सागर ऋषये नमः ॥

अन्वयबोध

श्लोक–

निर्दुर्विरपि आङ् एव,
उच्चैः नीचैः शनैः शनैः।
अभि परि पृथक् यावत्,
विना नाना अहो अयो ॥44॥

अर्थ–

निर्	बिना
दुर्	कठिन, बुरा
वि	अभाव सूचक
अपि	भी
आङ्	मर्यादा अर्थ, तक ।
एव	ही
उच्चैः	ऊँचे स्वर से, ऊपर, ऊँचा।
नीचैः	नीचे स्वर से, नीचे।
शनैः-शनैः	धीरे - धीरे ।
अभि	लक्षण, निशानी, अभिमुखत्व में।
परि	मर्यादा अर्थ में, भाग
पृथक्	अलग
यावत्	जब तक
विना / नाना ।	बिना, बगैर, अभाव सूचक
अहो । अयो ।	प्रायः, अचरज ।

अन्वय बोध

श्लोक-

तरसा तरसा यस्मात्,
अथवा यदि वा प्रगे।
श्वः परश्वः क्वचित् अद्य,
ओं नमः स्वस्ति सं ननु ॥42॥

अर्थ-

तरसा-तरसा	शीघ्र - शीघ्र
यस्मात्	जिससे, जिस कारण से
अथवा	अथवा
यदि	वा
वा	अथवा
प्रगे	प्रात: काल
श्वः	कल (आगामी)
परश्वः	परसों
क्वचित्	कुछ, कहींपर, कभी, कालार्थ
अद्य	आज।
ओं	स्वीकृति अर्थ।
नमः	नमस्कार, नमन।
स्वस्ति	मंगल, कल्याण, सुख।
शम्	शान्ति, सुख, कल्याण।
ननु	शंका, प्रश्नात्मक अवधारणा, पृच्छना।

समर्पण

हे क्षमामूर्ति। समताधारी।
मम आदर्श गुरुवर।
आप श्री के चरणों में सिद्ध, श्रुत, आचार्य भक्ति
पूर्वक कोटिशः नमोस्तु।
हे भगवन्!
गुरु भक्ति आयाम महोत्सव पर्व के
उपलक्ष्य में आपके द्वारा सृजित 77 कृतियों
में यह संस्कृत भाषा में रची गयी मौलिक
कृति तत्त्वोपदेश आपके पावन पुनीत करकमलों
में सादर समर्पित।

विराग स्तुतिः

राष्ट्र सन्त! गणाचार्य!, प्रतिकर्म प्रवर्तकः।
युगाचार्य! जिनाचार्य!, वन्दे विराग सागरम् ॥1॥

उपसर्ग विजेता यः, गुरूणां गुरुः श्री गुरुः।
पंचाचार समायुक्तः, वन्दे विराग सागरम् ॥2॥

यस्मिन् संघे सदाचार्यीः, श्रमणी श्रमणाः तथा।
श्रावक श्राविकाश्चेति, वन्दे विराग सागरम् ॥3॥

रागहीनः विरागः सन्, विरागैव मनोहरः।
यः शोभते विरागेन, वन्दे विराग सागरम् ॥4॥

शास्त्रं श्रुत्वा पठित्वा च, ज्ञात्वा ध्यात्वा पुनः पुनः।
सर्वोदयां कृतां टीकां, वन्दे विराग सागरम् ॥5॥

□

रचयिता
श्रमणाचार्य विभव सागरः

अन्वय बोध

भोः! उच्चकैः न गन्तव्यं,
नीचकैः न कदापि वै।
अश्वकः मंगलं अस्ति
कुम्भं दुग्धं च मंगलम् ॥43॥

अर्थ-

भोः!	भो, हे, सम्बोधन सूचक
उच्चकैः	ऊँचा, ऊँचे,
न	नहीं
गन्तव्यं	जाना चाहिए।
नीचकैः	नीचे
न	नहीं
कदापि	कभी भी
वै	अवधारणा अर्थ में 'ही'
अश्वकः	उत्तम घोड़ा
मंगलं अस्ति।	मंगल
कुम्भं दुग्धं	घड़ा और दूध
च	और अन्य भी
मंगलम्।	मंगल होता है।

मंगल-स्मरण

नमः श्री आदिनाथाय, रक्ष-रक्ष सदा-सदा।
यत्र-यत्र यदा मोहः, तत्र-तत्र तदा-तदा॥4॥

अन्वयार्थ-

यत्र-यत्र	जहाँ-जहाँ जिस स्थान में
यदा	जब
मोहः	मोह कर्म उदय हो
तत्र-तत्र	वहाँ-वहाँ उस स्थान में
तदा-तदा	तब-तब उस समय
सदा-सदा	हमेशा-हमेशा
रक्ष-रक्ष	रक्षा करो, रक्षा करो।
श्री आदिनाथाय नमः	श्री आदिनाथ के लिए नमस्कार हो।

भावार्थ- हे भगवन्! मुझे जहाँ-जहाँ, जिस-जिस जगह, जिस-जिस वस्तु के प्रति मोह भाव जागे आप वहाँ-वहाँ उस समय तब-तब मेरी रक्षा करो रक्षा करो इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए श्री आदिनाथ भगवान के लिए नमस्कार हो।

संसार में कोई सुखी नहीं

तुदत्येकः वदत्येकः,
हसत्येकः यदा-कदा।
पश्याम्यहं यदा लोके,
नास्ति कोऽपि सुखी कदा॥37॥

अन्वयार्थ-

लोके यदा-कदा	इस परिवर्तनशील संसार में जब-कभी, एक ———
एकः तुदति	
एकः वदति	एक बोलता है।
एकः हसति	एक हँसता है।
लोके	संसार में
यदा	जब मैं
अहं पश्यामि	मैं देखता हूँ
तदा	तब मुझे
कोऽपि	कोई भी
कदा	कभी
सुखी नास्ति।	सुखी नहीं दिखता।

भावार्थ- इस संसार की दशा तो देखो जब-कभी एक प्राणी ———, एक अन्य जीव बोलता है, एक अन्य जीव हँसता है। जब अध्यात्म दृष्टि से मैं संसार को देखता हूँ तो मुझे इस संसार में कहीं कोई भी सुखी नजर नहीं आता।

विचित्रता का कारण क्या?

श्लोक

नाना जीवाः सदा सन्ति,
कर्म भिन्नम् पृथक्-पृथक्।
बुद्धिः पृथक् पृथगस्ति,
एतेन चित्रता गतिः॥40॥

अन्वयार्थ-

नाना जीवाः सदा सन्ति	सदा से नाना प्रकार जीव हैं।
कर्म भिन्नम् पृथक् पृथक्	सभी के कर्म भिन्न-भिन्न हैं।
बुद्धिः पृथक्-पृथक् अस्ति	बुद्धि भी सभी की अलग-अलग है।
एतेन चित्रता गतिः	इस कारण से कर्मों की गति के कारण जीवों की अवस्थायें भी भिन्न-भिन्न हैं।

भावार्थ- संसार में सदा से नाना प्रकार के जीव हैं। सबके कर्म भिन्न-भिन्न हैं, सबकी बुद्धि भी अलग-अलग है इस कारण से यह विचित्रता कर्म फल के कारण है।

मंगलाचरण

नमोऽस्तु जिनदेवाय! नमोऽस्तु गुरवे सदा।
नमोऽस्तु श्रुत शास्त्राय, नमोऽस्तु परमात्मने॥1॥

अर्थ -

जिन देवाय नमः अस्तु	जिनेन्द्र देव के लिए नमस्कार हो। हो।
सदा	हमेशा
गुरवे नमः अस्तु	गुरु के लिए नमस्कार हो।
श्रुत शास्त्राय नमः अस्तु	श्रुत शास्त्र के लिए नमस्कार हो।
परमात्मने नमः अस्तु	जिन परमात्मा के लिए नमस्कार हो।

भावार्थ- जिनेन्द्र देव तुम्हारे लिए नमस्कार हो। गुरुदेव के लिए नमस्कार हो। श्रुत शास्त्र के लिए नमस्कार हो। परमात्मा के लिए नमस्कार हो।

मंगलाचरण

श्री वीतराग देवाय, सिद्धाय स्वात्म सिद्धये।
नमः श्री गुरु देवाय, नमामि जिनशासनम् ॥2॥

अन्वयार्थ =

स्वात्म सिद्धये	निज आत्मा की सिद्धि के लिए
श्री सिद्धाय नमः	श्री सिद्ध परमात्मा के लिए नमस्कार हो।
वीतराग देवाय नमः	वीतराग देव के लिए नमस्कार हो।
श्री गुरुदेवाय नमः	श्री गुरुदेव के लिए नमस्कार हो
जिन शासनम् अपि नमामि।	जिन शासन को भी नमस्कार हो।

भावार्थ— निज आत्मा की सिद्धि के लिए सिद्ध परमात्मा के लिए, श्री वीतराग देव के लिए, श्री गुरुदेव के लिए और जिन शासन के लिए भी मेरा नमस्कार हो।

÷ शास्त्र प्रतिज्ञा एवं प्रयोजन ÷

तत्त्वोपदेश शास्त्र हि,
स्वात्म तत्त्व विधायक:।
पूर्वाचार्यानु भावेन,
कथ्यते कर्म नाशनम् ॥3॥

अन्वयार्थ—

स्वात्म तत्त्व विधायक:	निज तत्त्व आत्मा का कथन करने वाला
तत्त्वोपदेश शास्त्रं हि	तत्त्वोपदेश शास्त्र यह शास्त्र
पूर्वाचार्यानुभावेन	पूर्वाचार्यानुक्रम से
कर्म नाशनम् कथ्यते	कर्म नाश करने को कहा जाता है।

भावार्थ— निज आत्म तत्त्व का कथन करने वाला यह तत्त्वोपदेश शास्त्र पूर्व आचार्य परम्परा से कर्म क्षय के लिए यहाँ कहा जाता है।

कर्म फल विचित्रता का कारण

श्लोक →
जानाति शास्ति अन्यद्,
अहो धर्म कुरु सदा।
रिक्तोऽस्ति सदा स्वस्मिन्,
सैव मन्ये विचित्रता ॥38॥

अन्वयार्थ—

जीव:	जीव
धर्म जानाति	धर्म को जानता है
धर्म अन्यत् शास्ति।	अन्य को धर्म का स्वरूप कहता है-
अहो जीव! धर्म कुरु सदा	अहो जीव! तुम सदा धर्म को करो, किन्तु
सदा स्वस्मिन् रिक्त: अस्ति	हमेशा अपने जीवन में धर्माचरण से रहित है।
सा एव	वह ही
विचित्रता मन्ये	विचित्रता का कारण मानता हूँ।

भावार्थ— जीव धर्म को जानता भी है। अन्य जीवों को धर्म का स्वरूप भी कहता है कि धर्म करो। किन्तु स्वयं धर्म नहीं करता यही एक विचित्र कारण है।

कर्म गति विचित्रता

आगच्छति अहो एक:,
गच्छत्येक: अहो क्षणे।
एष: स्वभाव: लोकस्य,
कर्मणां चित्रता गति ॥39॥

अन्वयार्थ ÷

लोकस्य	संसार का
एष:	यह
स्वभाव:	स्वभाव है कि
अहो	अहो
एक: आगच्छति	एक जीव जन्म लेने आता है, जन्म लेता है।
अहो	आश्चर्य खेद पूर्वक कि
तस्मिन् क्षणे	उस ही क्षण में
एक गच्छति	एक अन्य जीव मरण को प्राप्त हो जाता,
कर्मणां विचित्रता गति	सच में कर्मों की गति, दशा निराली है।

भावार्थ— संसार का यह स्वभाव है कि यहाँ एक जीव जन्म लेता है उसी दूसरा कोई जीव मरण को प्राप्त हो जाता है, सच में कर्मों की दशा निराली है।

धर्म धारण का फल

क्षमादि-दश-धर्मास्तु,
अहिंसादि महाव्रतम् ।
धारयंति सदा ये ये
गच्छंति ते शिवालयं ॥36॥

अन्वयार्थ :-

क्षमादि दश धर्माः अहिंसादि महाव्रतम्	उत्तमक्षमादि दश धर्म तथा अहिंसा आदि पंच महा व्रत को नियम पूर्वक प्रतिज्ञा पूर्वक
तु ये-ये धारयन्ति	जो-जो प्राणी धारण करते हैं
ते	वे
शिवालयं गच्छन्ति	शिवालय को जाते हैं ।

भावार्थ— जो-जो प्राणी उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का तथा अहिंसा आदि पाँच महाव्रतों को जीवन में धारण करते हैं वे परम्परा क्रम से निर्वाण को पाते हैं ।

पंच परमेष्ठि स्मरण

अर्हत् - सिद्धौ तथाचार्यो, पाध्याय: सर्वसाधव: ।
एते पञ्च जगत् पूज्य:, नित्यं कुर्वन्तु मंगलम् ॥5॥

अन्वयार्थ-	
जगत् पूज्य:	जगत पूज्य
अर्हत् सिद्धौ	अर्हन्त - सिद्ध
तथा	तथा
आचार्य:	आचार्य
उपाध्याय:	उपाध्याय
सर्व साधव:	सर्व साधुगण
एते	ये
पञ्च	पाँच परमेष्ठि
नित्यं	हमेशा
मंगलम्	मंगल
कुर्वन्तु	करें ।

भावार्थ— जगत में पूजा को प्राप्त श्री अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्व साधु ये पाँच परमेष्ठि हमेशा मंगल करें ॥4॥

श्रेयासं वासुपूज्यंञ्च, विमलं मल-शोधनम् ।
अनंतं धर्म-शान्तिंच, श्री कुन्थवर-जिनेश्वरम् ॥4॥

अन्वयार्थ-

श्रेयासं	श्रेयांसनाथ को
वासुपूज्यं	वासुपूज्य को
च	और
मल शोधनम्	कर्म शोधन को
विमलं	विमल नाथ को
अनंत	अनंतनाथ को
धर्म-शान्तिं	धर्म और शान्ति को
च	और श्री कुन्थु
श्री कुन्थु अर जिनेश्वरम्	अर जिनेश्वर को
	०
वन्दे ।	वन्दना करता हूँ ।

भावार्थ— श्रेयांसनाथ, वासुपूज्य, और कर्ममल शोधन करने को विमलनाथ को, अनंतनाथ को धर्म और शान्ति को श्री कुन्थुनाथ को अर जिनेश्वर को वन्दना करता हूँ ।

कौन क्या फल देता है?

श्लोक—

विनय: फलति विद्यां,
विद्या फलति संयमम् ।
संयम: फलति ध्यानं,
ध्यानं तु परं मोक्षजम् ॥33॥

अन्वयार्थ-

विनय:	विनय
विद्यां फलति	विद्या को उत्पन्न करती
विद्या	विद्या
संयमम्	संयम को
फलति	फलता है ।
संयम:	संयम
ध्यानं फलति	ध्यान को प्रकट करता और
ध्यानं तु	ध्यान निश्चय से
परं	उत्कृष्ट अवस्था
मोक्षजम्	मोक्ष में उत्पन्न सुख को देता है ।

भावार्थ— विनय गुण विद्या को, विद्या गुण संयम को, संयम गुण ध्यान को, ध्यान गुण मोक्ष सुख को फलता है ।

आशीर्वाद

श्लोक –

त्वं जिन भव इत्याशी,
एषा मंगल कामना।
जिनो भूत्वा जयेत् विश्वं,
कुरु धर्म-प्रभावनाम् ॥34॥

अन्वयार्थ –

त्वं	तुम
जिन भव!	जिन हो
इत्याशी	यह आशीर्वाद है
एषा	यह
मंगल कामना	मंगल कामना है तथा
जिनो भूत्वा	जिन होकर के
विश्वं जयेत्	विश्व में जयशील हो
धर्म प्रभावनां	जिन धर्म की प्रभावना
कुरु ।	करो ।

भावार्थ – हे जीवराज! तुम जिन होओ यह हमारा आशीष है। यह हमारी मंगल-कामना है। तथा जिन होकर समग्र विश्व में जयवन्त हो जिन धर्म की प्रभावना करो।

' धर्म करने की प्रेरणा '

श्लोक –

यतो धर्मः ततो शान्तिः
यतो पापं ततो दुःखम्।
धर्मः सुखकरोऽसि तु,
अतः धर्म करोम्यहम् ॥35॥

अन्वयार्थ –

यतः:	जहाँ से
धर्मः:	धर्म प्रारंभ होता, प्रकट होता
ततः:	वहाँ से ही
शान्तिः:	शान्ति प्रकट होती है।
यतो पापम्	जहाँ से पाप जन्म लेता
ततो दुःखम्	वहाँ से, उस भव से दुःख है
तु	निश्चय पूर्वक
धर्मः सुखकरः असि	धर्म सुख का स्थान है
अतः अहं धर्मं करोमि।	अतः मैं धर्म करता हूँ।

भावार्थ – जहाँ से धर्म प्रकट होता है वहाँ से ही शान्ति प्रकट होती है और जहाँ से जीवन में पाप जन्म लेता है वहाँ से उस भावना से ही, उस कर्म से ही दुःख उत्पन्न होता है निश्चय पूर्वक धर्म ही सुख का स्थान है, अतः मैं धर्म धारण करता हूँ।

चतुर्विंशति स्तव

नमामि आदिनाथं हि, प्रथमं वृषभं जिनं।
वन्दे अजितनाथं तु, संभवं-चाभिनंदनम् ॥6॥

अन्वयार्थ –

प्रथम वृषभं जिनं	प्रथम तीर्थंकर वृषभ जिन को
आदिनाथं हि	आदिनाथ भगवान को
नमामि ।	नियमतः नमस्कार करता हूँ।
अजितनाथं	अजितनाथ भगवान की
वन्दे	वन्दना करता हूँ।
तु	निश्चय से
संभवम्	संभवनाथ
च	और
अभिनंदनम्	अभिनंदन भगवान की
वन्दे	वन्दना करता हूँ।

भावार्थ – प्रथम तीर्थंकर वृषभ जिन आदिनाथ भगवान को भाव सहित नमस्कार करता हूँ।

सुमत्यै सुमतिं वन्दे, पद्मं पद्म-विकासकम्।
सुपार्श्वं चन्द्रनाथञ्च, पुष्पदन्तञ्च शीतलम् ॥7॥

अन्वयार्थ –

सुमत्यै	सम्यक् मतिज्ञान की प्रकटता के लिए
सुमतिं	सुमति भगवान को व
वन्दे	मैं वन्दना करता हूँ।
पद्म विकासकं	हृदय कमल विकसित करनेवाले
पद्मं वन्दे	पद्मप्रभ की वन्दना करता हूँ।
च	और
सुपार्श्वं	सुपार्श्वनाथ को
चन्द्रनाथं	चन्द्रप्रभ तीर्थंकर को
च	और
पुष्पदन्तं	पुष्पदन्त
शीतलं	शीतल भगवान को
वन्दे	मैं वन्दना करता हूँ।

भावार्थ – समीचीन बुद्धि की प्राप्ति के लिए मैं सुमतिनाथ भगवान तथा हृदय कमल को विकसित करने वाले पद्मप्रभु भगवान सुपार्श्व और चन्द्रप्रभ को पुष्पदन्त और शीतलनाथ तीर्थंकर को वन्दना करता हूँ।

संयम धारण का फल

श्लोक –

मा विभेषि अहोजीव!
पश्य वने गजं पशुं ।
एतौ तु संयमौ धृत्वा,
अहो स्वर्ग गच्छतौ ॥32॥

अन्वयार्थ –

अहो जीव!	हे जीवराज!
मा विभेषि	तुम डरो मत ।
पश्य	देखो
वने	वन में
गजं पशुं	हाथी और पशु को
एतौ	ये दोनों
तु	निश्चय से संकल्पपूर्वक
संयमौ धृत्वा	द्रव्य-भाव दोनों संयम धारण कर
अहो	अहो दोनों जीव
स्वर्ग गच्छतौ	स्वर्ग को चले गये।

भावार्थ – हे आत्मन्! तुम डरो मत संयम धारण करो। देखो वन में हाथी ने और अन्य पशु ने संयम धारण किया। ये दोनों स्वर्ग गये।

मल्लि मुनिव्रतं श्रेष्ठं, नमिं नेमिं नमाम्यहम् ।
पार्श्वनाथं महं वन्दे, वन्दे वीरं सदा-सदा ॥9॥

अन्वयार्थ –	
अहं	मैं
मल्लिं	मल्लिनाथ
मुनिव्रतं श्रेष्ठं	मुनिव्रतों में श्रेष्ठ मुनिसुव्रत
नमिं	नमिनाथ
नेमिं	नेमिनाथ को
नमामि	नमस्कार करता हूँ। तथा
अहं	मैं
पार्श्वनाथं	पार्श्वनाथ को वन्दना करता हूँ।
वन्दे	वन्दना करता हूँ।
वीरं	वीर को
वन्दे	वन्दना
सदा-	सदा
सदा	सदा करता हूँ।

भावार्थ – मैं श्री मल्लिनाथ तीर्थंकर, उत्तम मुनिव्रत धारक मुनिसुव्रत, नमिनाथ नेमीनाथ को नमस्कार करता हूँ तथा पार्श्वनाथ को वन्दना करता हूँ। और हमेशा-हमेशा वीर भगवान महावीर भगवान को वन्दना करता हूँ।

ऋद्धि सिद्धि विशुद्धि कारक मंत्र

ओं अ सि आ उ सा मंत्रं,
यो जपति सुमानवः ।
ऋद्धि सिद्धि विशुद्धि-र्च,
भवति तस्य जीवने ॥12॥

अन्वयार्थ –

ओं अ सि आ उ सा नमः	पंच परमेष्ठि वाचक बीज, अरिहंत, सिद्ध, आचार्य उपाध्याय साधु वाचक पंच प्रथमाक्षर रूप नमन
मंत्रं	मंत्र को
यो	जो
सुमानवः	उत्तम मानव
जपति	जपता है।
तस्य जीवने	उसके जीवन में
ऋद्धिः भवति	ऋद्धि होती है।
सिद्धिः भवति	सिद्धि होती है।
च	और
विशुद्धिः भवति	विशुद्धि होती है।

भावार्थ – ओं अ सि आ उ सा इस मंत्र को उत्तम मानव महाभक्ति भाव से जपता है उसके जीवन में ऋद्धि-सिद्धि और विशुद्धि प्रकट होती है।

भक्त अमर होता है

श्लोक –

अथ भक्तामर स्तोत्रं,
मानतुंग कृता कृतिः ।
भक्तः अमरः अस्ति,
प्रारम्भे हि जिनोदितम् ॥29॥

अन्वयार्थ –

अथ	मंगल सूचक
भक्तामर स्तोत्रम्	भक्तामर स्तोत्र
मानतुंगकृत – कृतिः	मानतुंग आचार्य कृत रचना है।
तस्याम्	उसमें
प्रारम्भे	प्रारम्भ में ही
हि जिनोदितम्	मुनिराज ने कहा –
भक्तः अमरः अस्ति।	भक्त अमर है।

भावार्थ – भक्त अमर होता है। यह मंगल वाक्य भक्तामर स्तोत्र के प्रारम्भ में ही श्री मानतुंग आचार्य ने अपनी रचना में कहा।

कर्तव्य बोध

श्लोक :-

कर्तव्य मेव धर्मो हि,
कर्तव्य मेव जीवनम् ।
कर्तव्यमेव पूजा स्यात्,
कर्तव्यं च करोम्यहं ॥30॥

अर्थ-	
ही	निश्चय पूर्वक
कर्तव्यम् एव धर्मः ।	कर्तव्य ही धर्म है।
कर्तव्यम् एव	कर्तव्य ही
जीवनम् ।	जीवन है।
कर्तव्यम् एव	कर्तव्य ही
पूजा ।	पूजा है।
स्यात्	सापेक्षतः (पादपूरक)
च	और
अहं कर्तव्यं करोमि	मैं कर्तव्य को करता हूँ।

भावार्थ— निश्चय पूर्वक कर्तव्य ही धर्म है। कर्तव्य ही जीवन है। कर्तव्य ही पूजा है। अपेक्षाकृत कथन है। मैं कर्तव्य को करता हूँ।

ईश्वर का परिचय

श्लोक—

अनन्ताः ईश्वराः सन्ति,
राजन्ते ते शिवालये ।
स्वस्मिन्- स्वस्मिन् सदापूर्णः,
सर्वदा सुख भोगिनः ॥11॥

अर्थ-	
ईश्वराः अनन्ताः सन्ति ।	ईश्वर अनन्त हैं।
ते शिवालये राजन्ते ।	वे मोक्षपद, सिद्धालय में राजते हैं, रहते हैं।
स्वस्मिन्-स्वस्मिन् सदा पूर्णः	अपने - अपने स्वभाव में सदा परिपूर्ण हैं।
सर्वदा	हमेशा
सुख भोगिनः।	अनन्त सुख के भोगी हैं।

भावार्थ— ईश्वर संख्या की अपेक्षा अनन्त हैं। गुण सभी में एक समान हैं। क्योंकि अष्टकर्म नाशकर ही सभी परमात्मा हुए। वे परमात्मा सिद्धालय में शोभायमान हैं। और अपने-अपने स्वभाव में सदा स्वयंपूर्ण हैं। हमेशा प्रतिपल आत्मीय अनन्त सुख के भोगी हैं।

ऋषभादि - महावीरान्, एतान्सर्वान् जिनानपि ।
महाभक्त्या महाभक्त्या, महाभक्त्या नमामि तान् ॥10॥

अन्वयार्थ-	
अहं	मैं
महाभक्त्या	महाभक्ति भाव से
महाभक्त्या	महाभक्ति भाव से
महाभक्त्या	महाभक्ति भाव से
एतान्	इन चौबीस तीर्थंकरों में
सर्वान्	सभी को
ऋषभादि	ऋषभदेव से लेकर
महावीरान्	महावीर तक सभी
जिनान्	जिनवरों को
अपि	भी
तथा	तथा
तान् जिनान्	शेष एकदेश, सर्वदेश जिनों को
नमामि	नमस्कार- नमन करता हूँ।

भावार्थ— मैं महाभक्ति भाव से, महाभक्ति भाव से महाभक्ति भाव के साथ इन ऋषभादि महावीर पर्यन्त सभी जिनवरों का तथा शेष अन्य तीर्थंकरों तथा उन एकदेश जिन आचार्य, उपाध्याय, साधुओं को एवं सर्वदेश समस्त अरिहंत और सिद्ध समूह को नमस्कार करता हूँ।

संयम प्रेरणा

श्लोक—

भो भो मित्र! भवान् कोऽस्ति,
यस्मात् विभेषि संयमः।
धीरः वीरः महावीरः
वीरवंशज उत्तम ॥31॥

अन्वयार्थ—	
भो भो मित्र !	हे मित्र! हे मित्र!
भवान् कः अस्ति	आप कौन हैं
यस्मात्	जिस कारण
संयमात् विभेति	संयम धारण से डरते हो
धीरः	तू धीर
वीरः	वीर
महावीरः	महावीर
वीरवंशज	वीर वंश में उत्पन्न हुआ
उत्तम नरः अस्ति	श्रेष्ठ नर है।

भावार्थ— हे मित्र! आप कौन हैं? जिस कारण से आप संयम धारण- पालन से डरते हैं। आप तो धीर! वीर! महावीर! वीरवंश में उत्पन्न हैं श्रेष्ठ हैं।

÷ निजानुभूति अभिव्यक्ति ÷

अद्य दीपावली अस्ति,
रक्षाबन्धनमोत्सवः ।
पर्युषण महापर्व,
अद्यैव मम जीवने ॥28॥

अन्वयार्थ–

मम जीवने	मेरे जीवन में
अद्य एव	आज ही
पर्युषणमहापर्व	पर्युषण महापर्व
अस्ति ।	है।
अद्य एव	आज ही
दीपावली	दीपावली त्यौहार है।
अस्ति ।	
अद्य एव	आज ही
रक्षाबन्धनम्	रक्षाबन्धन
उत्सवः	उत्सव
अस्ति ।	है।

भावार्थ– हे प्रभो! आपके प्रसाद से मेरे जीवन में आज ही पर्युषण महापर्व पर्व है। आज ही दीपावली पर्व है। आज ही रक्षाबन्धन उत्सव है।

शान्ति-प्रार्थना

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय, सर्व-शान्तिं सदा कुरु।
एतेन मंत्र जापेन सर्वोपद्रव-नाशनम् ॥13॥

अन्वयार्थ–

ॐ ह्रीं श्री	ओम् अर्थात् पंचपरमेष्ठी स्वरूप
शान्तिनाथाय	शान्तिनाथ भगवान
सर्व शान्तिं	सभी प्रकार शान्ति को
सदा कुरु।	हमेशा करें।
एतेन मंत्रजापेन	इस मंत्र जाप करने से
सर्वोपद्रव-	सभी प्रकार के उपद्रव
नाशनम्	नाश हो।

भावार्थ– ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथाय सर्व शान्तिं सदा कुरु' इस मंत्र जाप के द्वारा सभी उपद्रव नाश हो।

गुरु उपदेश महिमा

श्लोक –
जिनाभावेऽपि सिंहस्य,
वने सुदृग् प्रजायते।
गुरूपदेश मात्रेण,
को मम ज्ञस्य दुर्लभः॥16॥

अन्वयार्थ–

वने	वन में
जिन अभावे अपि	जिनमंदिर, जिनराज का अभाव होने पर, भी
सिंहस्य	सिंहराज को
सुदृग् प्रजायते।	सम्यग्दर्शन उत्पन्न हुआ
गुरु उपदेश मात्रेण	गुरु उपदेश के प्रभाव से
तर्हि	तो फिर
मम ज्ञस्य	मुझ ज्ञानी जीव को
कः दुर्लभः	क्या दुर्लभ है? कुछ भी नहीं, सब लेगा।

भावार्थ– वन में जिनदेव और जिनमंदिर तथा जिनवाणी शास्त्र का अभाव होने पर भी सिंह को मात्र गुरु उपदेश सुनने से सम्यग्दर्शन हो गया। तो मुझ विवेकी को क्या दुर्लभ होगा? गुरु प्रसाद से सब लाभ होगा।

आत्म परिचय

श्लोक-
कोऽहं कोऽहं सदा कोऽहं,
सदैकोऽहं सदा-सदा।
निष्पापो ज्ञायको देवः,
निष्कषायो निराकुलः॥25॥

अर्थ–

अहं कः	मैं कौन हूँ?
अहं कः	मैं कौन हूँ?
सदा	हमेशा द्रव्य दृष्टि से
अहं कः	मैं कौन हूँ?
सदा अहं एकः	मैं द्रव्यदृष्टि से एक हूँ।
सदा-सदा	सदा - सदा
निष्पापः	पाप रहित
ज्ञायकः	ज्ञायक
देवः	देव
निष्कषायः	निष्कषाय और
निराकुलः	निराकुल हूँ।

भावार्थ– मैं कौन हूँ? मैं कौन हूँ? द्रव्यार्थिक नय से मैं कौन हूँ? मैं द्रव्यार्थिक नय से एक हूँ। सदा-सदा पापरहित, ज्ञायक, देव, कषाय रहित निराकुल और निर्भय हूँ।

तत्त्वोपदेश कैसा ?

श्लोक-

सरलं सहजं सुदृढं, सुन्दरं भाव वर्द्धकम्।
स्वात्म ज्ञापक शास्त्रं, तत्त्वोपदेश भावकम् ॥14॥

अन्वयार्थ-

सरलं सहजं	सरल सहज
सुदृढं	बहुत अच्छा
सुन्दरं भाववर्द्धकं	समीचीन भाववर्द्धक
स्वात्मज्ञापकं शास्त्रं	निज आत्म तत्त्व का ज्ञापक
तत्त्वोपदेशं	तत्त्वोपदेश शास्त्र
भावकम्	शुद्धभाव को करनेवाला है।

भावार्थ- सरल सहज अच्छा प्रशस्त भावों को बढ़ाने वाला यह आत्म तत्त्व का ज्ञापक तत्त्वोपदेश शास्त्र जी शुद्धभाव को करने वाला होगा।

सर्वश्रेष्ठ क्या है ?

श्लोक-

अहिंसा परमो धर्मः,
स्वाध्यायः परमं तपः।
सुज्ञानं परमं दानं,
महामंत्रं महाजपः ॥15॥

अन्वयार्थ-

अहिंसा	अहिंसा
परमो धर्मः	परम धर्म है।
स्वाध्यायः	स्वाध्याय
परमं तपः	परम तप है।
सु-ज्ञानं	सम्यग्ज्ञान दान ही
परमं दानं	श्रेष्ठ दान है।
महामंत्रं	महामंत्र का जाप ही
महाजपः	महाजाप है।

भावार्थ- अहिंसा धर्म श्रेष्ठ धर्म है। स्वाध्याय परम तप है। ज्ञानदान श्रेष्ठ दान है। णमोकार मंत्र जाप ही श्रेष्ठजाप है।

आत्मबोध

श्लोक

चेतना लक्षणो जीवः,
सोऽहं नित्यो निरंजनः।
ज्ञान दर्शन सम्पन्नः,
चित्-चमत्कार लक्षणम् ॥26॥

अर्थ-

चेतना लक्षणो जीवः	चेतना लक्षण वाला जीव है।
सः अहं जीवः	वह जीव मैं हूँ।
अहं नित्यः	मैं नित्य हूँ।
निरंजनः	निरंजन हूँ।
ज्ञान-दर्शन सम्पन्नः	ज्ञान-दर्शन उपयोग सहित हूँ।
चिद्-चमत्कार लक्षणम्।	चैतन्य-चमत्कार लक्षण धारक हूँ।

भावार्थ- चेतना लक्षण वाला जीव है। वह जीव मैं ही हूँ। मैं नित्य हूँ। मैं निरंजन हूँ। ज्ञान-दर्शन उपयोग सहित हूँ। और चैतन्य-चमत्कार लक्षण का धारक हूँ।

स्वरूप परिचय

यः त्वमसि अर्हं सोस्मि,
सोऽस्तु सोऽस्तु तथा-तथा।
त्वं त्वमसि अर्हं कोऽस्मि,
योस्मि सोस्मि जिनेश्वर ॥27॥

अन्वयार्थ-

जिनेश्वर !	हे जिनदेव !
यः त्वम् असि।	जो तुम हो
सः अर्हं अस्मि	वह मैं हूँ।
यः अस्तु	जो हो
सः अस्तु	सो हो
तथा तथा	वैसे-वैसे
त्वं त्वं असि	तुम तुम हो
अर्हं कः अस्मि	मैं कौन हूँ?
यः अस्मि	जो हूँ
सः अस्मि।	वह हूँ।

भावार्थ- हे जिनदेव! जो तुम हो वह मैं हूँ। तुम जो हो सो हो / वैसे तुम तुम हो / मैं कौन हूँ? मैं भी जो हूँ सो हूँ।

आत्मा का स्वरूप

एकोऽहं शुद्धजीवोऽहम्,
ज्ञान दर्शन संयुतः ।
उपयोगो सदा सिद्धो,
शुद्धो बुद्धो निरञ्जनः ॥20॥

अन्वयार्थ-

अहं	मैं
एकः	एक हूँ।
अहं शुद्ध जीवः	मैं शुद्ध जीव तत्त्व हूँ।
ज्ञान दर्शन संयुतः	ज्ञान दर्शन संयुक्त
उपयोगो	उपयोग वाला
सदा सिद्धो	सदासिद्ध
शुद्धो बुद्धो	शुद्ध - बुद्ध
निरंजनः	निरंजन आत्मा हूँ।

भावार्थ— मैं एक हूँ। मैं शुद्ध जीवतत्त्व हूँ। ज्ञान दर्शन सहित उपयोग वाला हूँ। सदा सिद्ध शुद्ध-बुद्ध नित्य निरंजन आत्मा हूँ।

अपूर्व रत्नत्रय

श्लोक—
वीतरागो परं देवो,
निर्ग्रन्थः परमं गुरुः।
सर्वज्ञ भाषितं शास्त्रं,
रत्नत्रयमपश्चिमम् ॥21॥

अन्वयार्थ—

वीतरागः	वीतराग
परं देवः	श्रेष्ठ देव।
निर्ग्रन्थः	निर्ग्रन्थ
परमं गुरु	उत्कृष्ट गुरु
सर्वज्ञ भाषितं	सर्वज्ञ कथित
शास्त्रं	शास्त्र ये तीन
अपश्चिमम्	अपूर्व
रत्नत्रयम्	रत्नत्रय हैं।

भावार्थ— श्रेष्ठ देव! वीतराग! उत्कृष्ट गुरु निर्ग्रन्थ मुनि! सर्वज्ञ भाषित श्रेष्ठ शास्त्र ये तीन अपूर्व रत्नत्रय हैं।

आत्म कल्याण प्रेरक
अनित्य भावना

जानीहि शाश्वतं नोऽस्तु,
शाश्वतं नास्ति वैभवम्।
पर्यायः गच्छति क्षिप्रं,
कल्याण मचिरं कुरु ॥24॥

अन्वयार्थ :-

शाश्वतं	पर्याय अपेक्षा मनुष्य भी शाश्वत
न	नहीं
अस्तु	हो।
वैभवम्	धन, महल, रूप सम्पदा विभव सदा
न	नहीं
शाश्वतं	शाश्वत रहता है।
पर्यायः	पर्याय
क्षिप्रं गच्छति	शीघ्रता से जाती है। अतः
अचिरं	शीघ्र ही
कल्याणं	कल्याण
कुरु	करो।

भावार्थ— मनुष्य, देव, तिर्यंचादि पर्याय भी सदा नहीं रहती। धन, महल, रूप, सम्पदा यह जड़ वैभव परिवर्तनशील है। पर्याय जल्दी से जाती है। अतः हे आत्मन्! तू अपना कल्याण शीघ्र ही कर ले।

मन को स्थिर करने का
उपाय

श्लोक-
स्वाध्यायादि तपः कार्यं,
करोम्यहं यथा - यथा।
तथा-तथात्मलाभश्च,
भवति भवति स्थिरम् ॥17॥

अन्वयार्थ-

यथा - यथा	जैसे - जैसे
स्वाध्याय आदि	स्वाध्यायादि आदि शुभ
तपः कार्यं	तप कार्य को
अहं	मैं
करोमि	करता हूँ।
तथा - तथा	वैसे-वैसे
आत्मलाभः	आत्मलाभ
भवति	भवति
-च	और
मनः स्थिरम्	मन स्थिर
भवति।	होता है।

भावार्थ— जैसे-जैसे स्वाध्यायादि आदि शुभ तप अनुष्ठान कार्य को मैं करता हूँ। वैसे-वैसे ही मुझे आत्मलाभ होता है। और मन भी स्थिर होता है।

हेयोपादेय कथन

सम्भाषणं ब्रुवेऽहं हि,
असद्भाषं त्यजाम्यहम् ।
अभयदानं कुर्वेऽहं
हिंसा पापं त्यजाम्यहम् ॥18॥

अन्वयार्थ –

अहं	मैं
सम्भाषणं	सम्भाषण को
हि	ही
ब्रुवे ।	बोलता हूँ ।
अहं	अहं
असद्भाषं	असद्भाषण को
त्यजामि ।	छोड़ता हूँ ।
अहं	अहं मैं
अभयदानं	अभयदान को
कुर्वे ।	करता हूँ ।
अहं	मैं
हिंसा पापं	हिंसा पाप को
त्यजामि ।	छोड़ता हूँ ।

भावार्थ – मैं सम्भाषण को ही करता हूँ। असद् भाषण को त्यागता हूँ। अभयदान को करता हूँ। हिंसा पाप को छोड़ता हूँ।

भाव विशुद्दि महिमा

विशुद्दि र्यत्र आयाति,
तत्र भवति संयमः।
विशुद्दि र्यत्र नायाति,
नास्ति तत्र तु संयमः॥19॥

अन्वयार्थ-

यत्र	जहाँ
विशुद्दिः	भावों में निर्मलता
आयाति ।	आती है, प्रकट होती है।
तत्र	वहाँ
संयमः	संयम उत्पन्न
भवति ।	होता है।
यत्र	जहाँ
विशुद्दिः	भाव निर्मलता
न आयाति	नहीं होती
तत्र तु	वहाँ नियम से
संयमः नास्ति ।	संयम भी नहीं होता है।

भावार्थ – जहाँ जिस आत्मा में भाव विशुद्दि होती है वहाँ उस आत्मा में संयम उत्पन्न होता है। जहाँ जिस जीव में भाव विशुद्दि नहीं होती वहाँ उस जीव में भाव संयम भी नहीं होता।

रत्नत्रय से साधु

जानाम्यहं निजात्मानं,
श्रद्दानञ्च करोम्यहम् ।
सम्यक् चारित्रं कुर्वेऽहं
हेतु : साधु सु संयमी ॥22॥

अन्वयार्थ-

अहं	मैं
निजात्मानं जानामि	निज आत्मा को जानता हूँ।
च	और
श्रद्दानं करोमि	श्रद्दान करता हूँ।
अहं	मैं
सम्यक् चारित्रं कुर्वे ।	सम्यक् चारित्र का पालन करता हूँ।
हेतुः	इस कारण से
साधुः सु संयमी	आत्मा साधु और संयमी होता है।

भावार्थ – मैं निज आत्मा को जानता हूँ। और आत्मा का श्रद्दान भी करता हूँ। तथा सम्यक् चारित्र का पालन भी करता हूँ। इस कारण आत्मा साधु और संयमी होता है।

अभेद दशा का वर्णन

देवोऽसि देवनाथोऽसि,
वीतराग- जिनोऽसि-च ।
इदमहं न जानामि,
त्वंकोऽसि अहमस्मि कः॥23॥

अन्वयार्थ –

त्वं कः असि	तुम कौन हो
देवः असि	देव हो
देवनाथः असि	देव नाथ हो
वीतरागः असि-च	वीत राग हो और
जिनः असि	जिन हो
इदम् अहं	यह मैं
न जानामि	नहीं जानता हूँ।
अहं कः अस्मि	मैं कौन हूँ
इदं अहं न जानामि	यह भी मैं नहीं जानता हूँ।

भावार्थ – तुम कौन हो?
तुम देव हो?
तुम देवनाथ हो?
तुम वीतराग हो?
जिन हो?
यह मैं नहीं जानता हूँ
मैं कौन हूँ
मैं यह भी नहीं जानता हूँ।